शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 मई 2013

सम्पादकीय

लोकतंत्र में सामंती शब्दावली

भारत देश को आजाद हुए अभी छियासठ साल ही हुए हैं। इसके पहले यह देश किसी न किसी राजा के अधीन रहा है। वह अपने देश के राजा हों अथवा विदेश के। यहां के धर्मग्रंथ राजाओं के चरित्रों से भरे पड़े हैं। इसलिए यहां के जनमानस में राज्य संचालन के लिए राजशाही की अमिट छाप पड़ी हुई है। व्यक्ति से लगाकर समाज और देश बनाने में शब्दों का अप्रतिम योगदान है। हमारे यहां तो शब्द को ब्रह्म की उपाधि दी गई है। शब्द की साधना करने वाले तपस्वियों ने अपने आचरण से शब्दों में असीम शक्ति भर दी है। कथनी और करनी का अंतर मिटने के बाद ही शब्द में शक्ति आती है। उसका असर युगों तक बना रहता है। लेकिन आज मनुष्य का साथ शब्दों ने छोड़ दिया है। आजादी के बाद हमने राजशाही पद्धति को तिलांजलि देकर लोकतंत्र को अपनाया। निश्चित ही यह पद्धति वैज्ञानिक युग के अनुरूप ही है, परंतु हमारे मानस पर आज भी राजशाही ने कब्जा जमा रखा है। तभी तो लोकतंत्र में हमें न सिर्फ सामंती शब्दावली बल्कि सामंतशाही के चिह्न और व्यवहार भी दिखाई पड़ रहा है। हमारे लोकतंत्र की शुरूआत ही लड़ाई से होती है। चुनाव हमेशा लड़े जाते हैं। अब जहां लड़ाई शब्द प्रयुक्त होगा, वहां भले ही मारकाट न मची हो, लेकिन शब्दों के बाण से एकदूसरे को - घायल करने का मौका कोई नहीं चूकना चाहता।

और फिर लड़ाई जीतनेके लिए सारे तरीके जायज की श्रेणी में आ जाते हैं। यदि चुनाव लड़ने के बजाय चुनाव खेले जाने लगे तो आज जैसा परिदृश्य चुनाव के दौरान दिखाई देता है, उसमें निश्चित ही बदलाव दिखाई देगा। लोकतंत्र में शब्द चलन में है सत्ता के लिए संघर्ष। यह लोकतंत्र की मूल भावना के ही खिलाफ है। जहां संघर्ष होगा, वहां सेवा भावना कभी दिखाई नहीं देगी। नेता स्वयं को जनता के सेवक कहलाना पसंद करते हैं, परंतु सेवकत्व भाव नदारद रहता है। लोकतंत्र में 'ताजपोशी', 'सिंहासन', 'युवराज', 'राजकुमार', 'कुंवर', 'श्रीमंत', 'राजमाता', 'ठाकुर', 'महारानी', 'प्रजा', जैसे सारे शब्द हामारी रगरग - में भरे सामंती विचारों का ही प्रतिनिधित्व करते हैं। सार्वजनिक समारोहों और चित्रों में नेताओं को पगड़ी, साफा, मुकुट आदि पहनाने से सामंती विचारों को मजबूती मिलती है। इनसे सेवा का नहीं बल्कि शासक और शासित का भाव ही जाहिर होता है। सामंती शब्दों के चलन में रहते हुए यदि हम नेताओं से जनता की सेवा की अपेक्षा करें तो यह दिवास्वप्न ही है। लोकतंत्र में वंशवाद को पनपाने में इन शब्दों का योगदान कम नहीं है। यदि हम चुनाव पश्चात सबसे बड़े दल की बजाय 'सबसे बड़े सेवादार' शब्द लिखने लगें तो नेताओं में थोड़ी बहुत सेवा की भावना का संचार हो सकता है। सिक्ख धर्म में यह परंपरा है। चुनाव जीतने के बाद उनमें यही लिखा जाता है कि अमुक वर्षों के लिए इस समूह को गुरु घर की सेवा करने का अवसर मिला है। हम संसद के लिए 'मंदिर' शब्द प्रयुक्त तो करते हैं, परंतु उस मंदिर में क्या होता है, यह किसी से छिपा नहीं है। लोकतंत्र को सामंती शब्दावली से मुक्त कराने की महती जिम्मेदारी मीडिया और साहित्यकारों की है। आज शब्द मनुष्य का साथ

छोड़ गए हैं। 'अर्थ' प्रधान युग होने से शब्दों के अर्थ बदल गए हैं। यदि राजनीति का मतलब सिर्फ धोखा देना, छलकपट करना, उठाना, गिराना, पछाड़ना, जलीकटी सुनाना, वैमनस्य बढ़ाना, फूट डालना, तुष्टिकरण, भ्रष्टाचार, अपराध करना और कराना, दोष दर्शन करना, समय आने पर पत्ते खोलना, चालें चलना और वे सब काम करना जिससे व्यक्ति के स्वार्थ की पूर्ति होती हो, तो ऐसे शब्द को तिलांजलि देकर 'लोकनीति' शब्द को अविलंब चलन में लाने की जिम्मेदारी साहित्यकारों की है। क्योंकि साहित्य का मूल कार्य दिलों को जोड़ने का है न कि तोड़ने का। लोकतंत्र की रक्षा के लिए सामंती शब्दों, प्रतीकों, चिह्नों को त्यागे बिना गुजारा नहीं है। हमारे स्वातंत्र्य वीरों की त्याग, तपस्या, बलिदान के अनुरूप देश बनाने के लिए सामंती शब्दावली से मुक्ति जरूरी है

- डा पुष्पेन्द्र दुबे